ज्ञान का विस्तार और उसके विभिन्न स्वरूप

प्रो. राजेन्द्र स्वरूप भटनागर

ज्ञान शब्द से समग्रता का आभास होता है। लेकिन स्कूली शिक्षा से ही हम ज्ञान को विभिन्न विषय क्षेत्रों में बंटा हुआ देखते हैं। समग्रता के बावजूद वे क्या आधार हैं जिनकी वजह से इन विषय क्षेत्रों का निर्धारण होता है? विभिन्न विषय क्षेत्रों में अर्जित ज्ञान की प्रमाणिकता कितनी होती है? प्रो. भटनागर ने इस लेख में बताया है कि ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों का निर्धारण, ज्ञान के स्वरूप का निर्धारण, विषय की प्रकृति एवं ज्ञान अर्जित करने की पद्धति से तय होता है।

यदि एक आदर्श स्थिति की बात करें, तो शिक्षण को एक ऐसी प्रक्रिया कहा जा सकता है, जिसमें शिक्षक शिक्षार्थी के व्यक्तित्व में निहित उन रचनात्मक क्षमताओं एवं संभावनाओं की अभिव्यक्ति में सहायक होता है जो शिक्षार्थी के विकास को गति एवं दिशा प्रदान करती है। इन संभावनाओं का संबंध व्यक्तित्व के विभिन्न पक्षों से होता है। विभिन्न प्रकार की कार्य क्षमताओं एवं कौशलों के अतिरिक्त व्यक्ति में नीर क्षीर विवेक का उदय और विकास है, जो शुभ-अशुभ, सुन्दर-असुन्दर तथा सत्य-असत्य में अन्तर करने में प्रेरक होता है। इन में सत्य असत्य का विवेक अथवा ज्ञान का क्षेत्र प्रधान भूमिका रखता है। वस्तुतः ज्ञान का क्षेत्र इतना व्यापक होता है कि शेष सभी पक्ष उसके अन्तर्गत समा जाते हैं। उदाहरण के रूप में कलाओं का ज्ञान, मनुष्य और समाज का ज्ञान, भाषा एवं इतिहास का ज्ञान, प्रकृति तथा उसके विभिन्न पक्षों का ज्ञान तथा गणित आदि को ज्ञान की व्यापकता को ग्रहण करने के निमित्त ध्यान में लाया जा सकता है।

परन्तु ये सभी ज्ञान ओर एकता एवं समानता को प्रदर्शित करते हैं, जिनके कारण विभिन्न क्षेत्रों के लिए 'ज्ञान' शब्द का प्रयोग होता है तथा दूसरी ओर विभिन्न क्षेत्र अपनी-अपनी मर्यादा में वैशिष्ट्य रखते हैं जिसके कारण उनमें से प्रत्येक में एक प्रकार की स्वायत्तता होती है।

एकता और समानता की दृष्टि से ज्ञान में, जैसा स्पष्ट है, तीन घटक लिए जाते हैं - ज्ञाता, ज्ञेय अथवा ज्ञान का विषय तथा इन दोनों के संबंध से उत्पन्न होने वाला ज्ञान। ज्ञान में उसके वैशिष्ट्य की दृष्टि से सत्यता, सार्वभौमिकता और निश्चयात्मकता को लिया जाता है। ध्यान रखने की बात यह है कि यह विशेषीकरण ज्ञान के आदर्श स्वरूप को दर्शाता है। मानवीय संदर्भ में बहुधा (यदि सदैव नहीं) वह आदर्श स्वरूप प्राप्त नहीं होता और इसलिए 'संभाव्य' तथा 'मिथ्या' जैसे विशेषण भी ज्ञान के संदर्भ में प्रयुक्त होते हैं।

ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों की दृष्टि से ज्ञान का स्वरूप, एक ओर विषय की प्रकृति तथा दूसरी ओर उन पद्धतियों से निर्धारित होता है जो विषय को जानने में अपनाई जाती रही हैं। इसके अतिरिक्त स्वयं ज्ञाता की भूमिका भी इसके रूप को प्रभावित करती है।

लेखक परिचय :

सेवानिवृत्त प्रोफेसर, दर्शनशास्त्र विभाग, राजस्थान विश्वविद्यालय।

पुस्तकें - दर्शन सरल परिचय, बर्कले का दर्शनः एक परिचय(राजस्थान हिन्दी ग्रन्थ अकादमी), आधुनिक पाश्चात्य चिन्तन तथा कुछ पुस्तकों का संपादन, दर्शन पर विभिन्न पत्र-पत्रिकाओं में लेख प्रकाशित।

सम्पर्क :

10/558, कावेरी पथ, मानसरोवर, जयपुर-20

मोटे रूप में ज्ञान की पद्धति में पूर्वाग्रहों से मुक्ति, वस्तु-विषय - घटना का गहन और व्यापक निरीक्षण, घटकों की जानकारी, तथ्यों का संकलन, तर्कयुक्त रूप में तथ्यों में संबंधों का निर्धारण एवं सामान्य सिद्धान्तों पर पहुंचने के प्रयास को लिया जा सकता है। विज्ञान के क्षेत्र में जानकारी को परिमाणीकरण में ढालना एक आधारभूत प्रक्रिया है। वैज्ञानिक वाक्य परिमाण से रहित अवस्था में, ज्ञान की दृष्टि में महत्त्व के नहीं होते। स्पष्ट है कि ज्ञान की यह पद्धति ज्ञाता से कठोर अनुशासन की अपेक्षा रखती है। दूसरी ओर यह भी ध्यान देने की बात है कि इस प्रकार की पद्धति का सम्यक-प्रयोग प्रकृति में उन विषयों पर ही संभव है, जिन्हें प्रयोगशाला के नियंत्रण में लाया जा सकता है। साधरणतया इन विषयों के अन्तर्गत निर्जीव अथवा जड़ वस्तुओं को लिया जाता है। परन्तु यहां एक ओर तो यह बात ध्यान देने की है कि जड़ अथवा 'भूत' तत्व को अब ऊर्जा पुंज के रूप में देखा जाता है और जो 'जड़' की उस परिकल्पना से भिन्न है जो पहले मानी जाती थी। दूसरी ओर विषयों के अन्तर्गत 'जड़' के विभिन्न रूपों को शामिल किया जाता है, यथा गैस, वायविक तथा तरल अवस्था में। भैतिकी में दिक्, काल, गति तथा ऊर्जा को भी प्रमुख रूप में लिया जाता है। रसायन तथा भौतिकी के अध्ययन में सामान्य वैज्ञानिक पद्धति के अतिरिक्त अनेक प्रविधियों अथवा तकनीकों का प्रयोग होता है। वैज्ञानिक प्रगति में प्रविधियों का आविष्कार तथा विस्तार स्वयं एक महत्त्वपूर्ण घटक है।

रसायन तथा भौतिकी से हटकर जब हम जीव जगत पर ध्यान देते हैं, तो विषय के स्वरूप की जटिलता तुरन्त परिलक्षित होती है। जीव, चाहे वह कितना ही सरल क्यों न हो, उसका आंगिक तंत्र उसे सामान्य निर्जीव जगत से सवर्था अलग कर देता है। सरलतम रूप में जीवन स्वयं जीव का प्रयोजन होता है तथा उसके आंगिक तंत्र का संचालन करता है। मनुष्य में प्रयोजन का घटक अत्यन्त विशिष्ट एवं जटिल रूप रखता है। यद्यपि जीव विज्ञान में रसायनिक तथा भौतिक प्रक्रियाओं की अपनी भूमिका होती है, यहां तक कि मानवीय अंगों में भी उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है, जीव की व्याख्या में उन प्रक्रियाओं के अतिरिक्त किसी और घटक की ओर भी संकेत मिलता है। यह तथ्य जीव विज्ञान के स्वरूप को रसायन तथा भौतिक से अलग कर देता है।

जीवन विज्ञान के इतर जब स्वयं अपने अथवा मानवों की ओर आते हैं, तब अनेक ऐसे विज्ञानों अथवा शास्त्रों को सामने पाते हैं, जो विभिन्न पक्षों से मानव के विषय में विभिन्न ज्ञान क्षेत्रों की ओर इंगित करते हैं। औषधि विज्ञान तथा उसकी शाखाएं एवं प्रशाखाएं, मनोविज्ञान, समाजशास्त्र, अर्थशास्त्र इतिहास, नृशास्त्र, भाषा विज्ञान तथा साहित्य, धर्म विज्ञान एवं धर्मयशास्त्र, नीतिशास्त्र, तत्वशास्त्र अथवा दर्शनशास्त्र जैसे ज्ञान क्षेत्र मानव के किसी न किसी पक्ष को उजागर करते हैं।

जहां तक ज्ञान अर्जन की बात है, ज्ञाता का पूर्वाग्रह से मुक्त होना, विषय तथा उसके घटकों का गहन एवं व्यापक पर्यवीक्षण, संबंधित तथ्यों का संकलन एवं आकलन एवं किन्हीं सामान्य निष्कर्षों की ओर बढ़ना तथा एक सिद्धान्त तन्त्र बनाना जो विषय की सम्यक समझ प्रदान कर सके - ये ज्ञान प्राप्ति की शर्तें हैं चाहे ज्ञान का विषय प्रकृति हो अथवा जीव एवं मानव। दूसरी बात जिसका पहले भी उल्लेख हो चुका है, ज्ञान का सत्य, सार्वभौमिकता एवं निश्चयात्मकता से युक्त होना है। अब जब उपर्युक्त विभिन्न ज्ञान क्षेत्रों पर पुनः दृष्टिपात करते हैं, तो पद्धति संबंधी शर्तों एवं ज्ञान के स्वरूप की अपेक्षाओं की दृष्टि से उन क्षेत्रों में प्रकृति विज्ञानो की तुलना में बहुत अन्तर पाते हैं।

जहां प्रकृति संबंधी विज्ञानों का प्रश्न है, उनमें पद्धति तथा ज्ञान के स्वरूप की शर्तें बड़े अंश में पूरी होती है। इन क्षेत्रों में जो ज्ञान एवं जानकारी उपलब्ध होती हे, वह एक ओर विज्ञान के शुद्ध सैद्धांतिक रूप का विकास और उसमें वृद्धि का परिचय देती है। दूसरी ओर उसका प्रायोगिक पक्ष प्रौद्योगिकी के स्वरूप तथा विकास को निर्धारित करता है। यह दूसरा पक्ष विज्ञान के सिद्धान्त तंत्र में पुष्टि का काम करता है तथा वैज्ञानिक के आत्म-विश्वास को बल प्रदान करता है। परन्तु पिछले तीन-चार दशकों में विज्ञान के इतिहास तथा उसके स्वरूप पर जो दार्शनिक विमर्श हुआ है, उसके फलस्वरूप विज्ञान के गढ़ की अक्षुण्ण वस्तुनिष्ठता को धक्का लगा है। कक्षा की स्थिति के बाहर, सत्यता, सार्वभौमिकता एवं निश्चयात्मकता को लेकर पहले जैसे विश्वास की स्थिति नहीं है।

एक अन्य विचार बिन्दु से ज्ञान में ज्ञाता की सामाजिक एवं ऐतिहासिक स्थिति तथा इसके फलस्वरूप ज्ञाता की मानसिक संरचना, चेतना एवं अचेतन रूप में, ज्ञान की खोज, अन्वेषण तथा निष्कर्षों पर प्रभाव डालती है और इस कारण ज्ञान की वस्तुनिष्ठता का क्षेत्र संकुचित हो जाता है। यह स्थिति उस समय और अधिक गंभीर होती है, जब हम मानव संबंधी ज्ञान क्षेत्रों की ओर बढ़ते हैं।

मानव संबंधी सभी ज्ञान क्षेत्रों में इस प्रश्न का उत्तर एक अनकही मान्यता के रूप में विचार पर ध्यान डालता है कि 'मूलतः मानव का स्वरूप क्या है'। पाठक स्मरण करेंगे रूसो तथा हॉब्ज के समाज संबंधित विचारों में मानव को लेकर क्रमशः ये मान्यताएं प्रभावी थीं कि मनुष्य निसर्ग से भला और सज्जन है और मनुष्य निसर्ग से क्रूर तथा स्वार्थी है। मनोविज्ञान जो किसी हद तक साइंस कहा जाता है, कोई एक रूप नहीं रखता। कोई मनोवैज्ञानिक चेतना के विषय में क्या मत रखता है, यह उसके अनुसंधान के रूप को निश्चित करता है। यदि चेतना को मनुष्य के वैशिष्ट्य के रूप में ले' तथा उसे अध्ययन/अनुसंधान का विषय मानें तब हमारा ध्यान मनोविश्लेषणवाद, प्रयोजनवाद आदि की ओर जाएगा। यदि हम चेतना को अन्य विषयों की भांति विषय ही नहीं मानें, तब हम

व्यवहारवाद की ओर बढेंगे। इतिहास के अध्ययन पर, जैसा पाठक सामयिक भारतीय संदर्भ में नोट करेंगे, इस बात का प्रभाव पड़ता है कि इतिहास किस विचारधारा की ओर झुका हुआ है। हिन्दु राष्ट्रवाद की भावना इतिहास का ध्यान एक दिशा में आकर्षित करती है, जबकि वामपन्थी विचारधारा इतिहास को भिन्न दिशा प्रदान करती है। अन्य मानव संबंधित शास्त्रों में भी इसी प्रकार के विचार वैभिन्नय को परिलक्षित किया जा सकता है।

किसी भी मानवीय अनुसंधान के विषय में एक रोचक तथ्य यह है कि कोई शास्त्र अथवा विचारक यह नहीं कहता कि उसने वस्तुनिष्ठता की मांगों की अवहेलना की है। एक दूसरी बात यह है कि विज्ञान के ज्ञान को एक आदर्श के रूप में देखा जाता है। उसमें वस्तुनिष्ठता सर्वाधिक होती है तथा निष्कर्ष भरोसे के योग्य होते हैं। इसलिए प्रत्येक अनुसंधानकर्ता, जाने अनजाने उसी आदर्श को सामने रख कर अपना कार्य करता है। यद्यपि यह भी स्वीकार किया जाता है कि मानव संबंधित विज्ञान, प्रकृति विज्ञानों से मूल रूप से भिन्न है। मानव का स्वरूप तथा उसका निर्जीव पदार्थों एवं पशुपक्षियों से भेद, मानव संबंधित विज्ञानों को एक विशिष्ट रूप में प्रभावित करते हैं, जिससे प्रकृति विज्ञान मुक्त होते हैं।

लगभग किसी भी मानव विज्ञान/शास्त्र को लें, उसमें परस्पर विरोधी सिद्धांततंत्र और विचारधाराएं मिलती हैं। प्रकृति विज्ञानों में, इसके विपरीत, विरोधी विचारधाराओं की उपस्थिति 'न' के बराबर होती है। यद्यपि प्रकृति विज्ञानों का इतिहास यह दर्शाता है कि वैज्ञानिक सिद्धांतों में भी क्रांतिकारी परिवर्तन हुए हैं और होते रहते हैं।

यहां एक बात और ध्यान देने की है कि अर्थशास्त्र, राजनीतिशास्त्र तथा समाजशास्त्र को समाज-विज्ञानों के अन्तर्गत रखा जाता है। जबकि साहित्य, कला तथा दर्शनशास्त्र को मानविकी अथवा हयूमेनिटीज के अन्तर्गत रखा जाता है। मनोविज्ञान को प्रकृति विज्ञान के क्षेत्र में रखने की प्रवृत्ति है तथा इतिहास को समाज विज्ञानों में। भाषा विज्ञान की स्थिति इतिहास जैसी मानी जा सकती है। कदाचित इस अन्तर का एक कारण इन क्षेत्रों में अध्ययन एवं अनुसंधान विधि की भिन्नता है।

ज्ञान के विभिन्न क्षेत्रों के उपर्युक्त भेद इस मौलिक प्रश्न को जन्म देते हैं कि क्या ज्ञान कोई एकरूप वास्तविकता नहीं है ? क्या सत्य की झलक सभी क्षेत्रों में भिन्न-भिन्न हो सकती है ? यदि ज्ञान में निश्चात्मकता नहीं है, सार्वभौमिकता का अभाव है या कमी है, सत्य का स्वरूप विवादग्रस्त रहता है, तब क्या तथाकथित ज्ञान को ज्ञान कहा जा सकता है?

हमारी नियति हमारे परिसीमन पर आश्रित है। साथ ही यह भी तथ्य है कि हमारी आकांक्षाएं जीवन के किसी भी क्षेत्र में, हमें जो प्रदत्त हैं, उससे आगे जाने के लिए प्रेरित करती हैं। सर्वविदित है कि खेल जगत में विभिन्न खेलों में जो विश्व रिकॉर्ड बनते हैं, उन्हें तोड़ने तथा नया मानकांक बनाने की इच्छा प्रत्येक श्रेष्ठ खिलाड़ी की होती है। प्रकृति का क्षेत्र असीम है। विज्ञान की जानकारी कभी भी उस अवस्था में नहीं होती कि वैज्ञानिक अपने कार्यक्रम को पूरा हुआ मान लें। प्रकृति विज्ञानों के प्रत्येक क्षेत्र में नित नये आविष्कार तथा अनुसंधान होते रहते हैं। वैज्ञानिक के सामने और जानने की चुनौती सदा बनी रहती है। समाज विज्ञानों में, मानव स्वरूप की जटिलताओं के रहते हुए भी, मानव तथा समाज के विषय में सर्वमान्य सिद्धांत तंत्र की मांग सदैव चुनौति का काम करती है। यहां तक कि कलाओं के क्षेत्र में भी कलाधर्मी सत्य के अन्वेषण को लक्ष्य बनाता है तथा उसी को लेकर अपनी अनुभूति को कलाकृति के रूप में अभिव्यक्त करने का प्रयास करता है। एक गंभीर शोधकर्ता कभी संतोष नहीं करता तथा सत्य के निश्चय में निरंतर संलग्न रहता है। ऐसा करने में उसे अपने विचारों से संघर्ष करना पड़ता है, सत्य के विषय में अपने विचार बार-बार बदलने पड़ते हैं।

इन बातों से स्पष्ट होता है कि जानने की प्रक्रिया एक सतत अभियान है। महत्त्व की बात यह है कि यदि हम सत्यान्वेषण में रुचि रखते हैं तो हमें अपने बोध को खुला तथा व्यापक रखने का निरन्तर प्रयास करना चाहिए। यह प्रक्रिया हमें दुराग्रहों तथा /रुढ़ियों से बचाती है एवं हमारे व्यक्तित्व के रचनात्मक पक्ष को जीवित रखती है। ◆

शिक्षा विमर्श के सभी पाठकों से अनुरोध है कि वे अपनी वार्षिक सदस्यता का नवीनीकरण कराएं। वार्षिक सदस्यता शुल्क 180 रुपये है।

शिक्षा विमर्श के सभी भुगतान 'दिगन्तर शिक्षा एवं खेलकूद समिति, जयपुर' के नाम डिमांड ड्राफ्ट या मनीऑर्डर से देय होंगे। चैक से भुगतान करने पर स्थानीय चैक के अलावा 45 रुपये अतिरिक्त जोड़ें।

पता :
दिगन्तर
टोडी रमजानीपुरा,
जगतपुरा, जयपुर - 302025
फोन (0141) 2750230
09351435470 (संपादकीय)
ई मेल-shikshavimarsh@yahoo.co.in
vimarsh@digantar.org